ग्रामीण धार्मिक व्यवस्था में परिवर्तन के प्रतिमान
(उत्तर प्रदेश के अयोध्या जनपद के हैरिंगटनगंज विकासखंड के विशेष सन्दर्भ में)

रेखा पाल*[1] & डॉ. सत्य प्रकाश गुप्ता[2]

*[1] पी-एच.डी. शोधार्थी, समाजशास्त्र-विभाग, का. सु. साकेत पी. जी. कॉलेज, अयोध्या (उत्तर प्रदेश), भारत

E-Mail: srpal1190@gmail.com

[2]प्रोफेसर, समाजशास्त्र-विभाग, का. सु. साकेत पी. जी. कॉलेज, अयोध्या (उत्तर प्रदेश), भारत

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.17317411

Accepted on: 15/09/2025 Published on: 10/10/2025

सारांश:

आधुनिक काल में शिक्षा, धर्मनिरपेक्षीकरण, औद्योगीकरण, यातायात और विशेषकर संचार ने ग्रामीण समुदाय को जिन रूपों में प्रभावित किया है उनमें से एक प्रमुख रूप धार्मिक-जीवन का है। यातायात और संचार के नवीन साधनों के विस्तार और शिक्षा के विस्तार के कारण ग्रामीण समुदाय वृहद हिन्दू धार्मिक-संस्कृति के अत्यधिक निकट आ गया है और धर्मनिरपेक्षता व लौकिकीकरण के नवीन-मूल्यों का भी ग्रामीण समुदाय में अबाध प्रवेश हो रहा है। उपरोक्त परिस्थितियों के आलोक में प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत यह देखने का प्रयास किया गया है कि ग्रामीण धार्मिक विश्वासों एवं कर्मकाण्डों में इन नवीन-शक्तियों के कारण किन नवीन-मूल्यों एवं प्रवृत्तियों का विकास हो रहा है?

मुख्य शब्द: ग्रामीण समाज, धार्मिक व्यवस्था, सामाजिक परिवर्तन, आस्था एवं विश्वास, ग्रामीण समुदाय।

परम्परागत भारतीय समाज एक धर्म प्रधान समाज रहा है जहाँ धर्म को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महत्ता प्राप्त होती रही है। धर्म व्यक्ति, परिवार और समाज के जीवन को अगणित रूपों में प्रभावित करता रहा है। भारतीय समाज में भौतिक सुख-प्राप्ति को जीवन का परम लक्ष्य न मानकर धर्म संचय को प्रधानता दी गयी है। स्पष्ट है कि भारतीय सामाजिक व्यवस्था मूलतः धर्म पर आधारित है। इसी तरह धर्म के आधार पर व्यवस्था को निर्मित करने का प्रयास किया गया है। भारतीय समाज में व्यक्ति ज्ञान, भक्ति और कर्म के द्वारा परमेश्वर के स्वरूप को समझने का प्रयत्न करता रहा है और वह जीवन के परम-सत्य को जानने की कोशिश करता रहा है। **राधाकृष्णन** ने लिखा है कि - *"धर्म की धारणा के अन्तर्गत हिन्दू उन सब अनुष्ठानों*

और गतिविधियों को ले आता है जो मानवीय जीवन को गढ़ती और बनाये रखती हैं। हमारे पृथक-पृथक हित होते हैं, विभिन्न इच्छाएं होती हैं और विरोधी आवश्यकताएं होती हैं जो बढ़ती हैं और बढ़ने की दशा में ही परिवर्तित भी हो जाती हैं। उन सबको घेर-घार कर एक समूचे रूप में प्रस्तुत कर देना धर्म का प्रयोजन है। धर्म का सिद्धान्त हमें आध्यात्मिक वास्तविकताओं को मान्यता देने के प्रति सजग करता है, संसार से विरक्त होने के द्वारा नहीं अपितु इसके जीवन में इसके व्यवसाय (अर्थ) और इसके आनन्दों (काम) में आध्यात्मिक विश्वास की नियंत्रक शक्ति का प्रवेश कराने के द्वारा। जीवन एक है और इसमें पारलौकिक (पवित्र) और ऐहिक (सांसारिक) का कोई भेद नहीं है। भक्ति और मुक्ति एक दूसरे के विरोधी नहीं है। धर्म, अर्थ और काम साथ ही रहते हैं। दैनिक जीवन के सामान्य व्यवसाय सच्चे अर्थों में भगवान की सेवा है। सामान्यतःकृत कार्य भी उतने ही प्रभावी हैं जितना कि मुनियों की साधना है"[1]

स्पष्ट है कि धर्म हिन्दुओं के जीवन को जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेक रूपों में प्रभावित करता रहा है। इस सम्बन्ध में **राधाकमल मुखर्जी** ने लिखा है कि- *"भारतीय जीवन रचना का निर्माण आत्मा, प्रकृति और परमात्मा और उनके पारस्परिक सम्बन्धों की विवेचना करने वाले सूक्ष्म आध्यात्मिक दर्शन के आधार पर हुआ है।"*[2] भारतीय समाज में धर्म के अर्थ को 'रिलीजन' शब्द के अनुवाद के रूप में नहीं समझा जा सकता है बल्कि यहाँ धर्म एक अत्यन्त व्यापक प्रत्यय है। यह उस मौलिक शक्ति के रूप में है जो भौतिक और अभौतिक व्यवस्था का आधारभूत है और जो उस व्यवस्था को बनाये रखने के लिए आवश्यक है। **गिलिन और गिलिन** ने लिखा है कि- *"एक सामाजिक समूह में व्याप्त उन संवेगात्मक विश्वासों को जो किसी अलौकिक शक्ति से सम्बन्धित हैं और साथ ही ऐसे विश्वासों से सम्बन्धित व्यवहारों, भौतिक वस्तुओं एवं प्रतीकों को धर्म के समाजशास्त्रीय क्षेत्र में सम्मिलित माना जा सकता है।"*[3]

'रिलीजन' शब्द के अन्तर्गत अलौकिक विश्वास एवं अधिप्राकृतिक शक्तियां आती हैं परन्तु हिन्दु समाज में धर्म का सम्बन्ध मुख्यतः मनुष्य के कर्त्तव्य-बोध से है। हिन्दू धर्म एक ज्ञान है जो अलग-अलग परिस्थितियों में व्यक्तियों के विभिन्न कर्त्तव्यों को बतलाता है तथा उन्हें कर्त्तव्य पथ पर आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा प्रदान करता है और उनमें मनोवाँछित गुणों का विकास करता है। भारतीय धार्मिक-ग्रन्थ जैसेकि- वेद, उपनिषद, गीता, स्मृतियाँ तथा पुराण इत्यादि हिन्दू धर्म के मूल स्रोत हैं। इन्हीं के माध्यम से भारतीय सामाजिक व्यवस्था के स्वरूप को निर्धारित किया गया है। भारतीय समाज में धर्म की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसके विविध स्वरूपों की विद्यमानता का है। 'वृहद' परम्पराओं की उपस्थिति जो वेद, उपनिषद, पुराण, स्मृति, रामायण, महाभारत, गीता इत्यादि ग्रन्थों, महान दार्शनिकों तथा धर्म प्रचारकों के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है तो भारतीय समाज में धर्म का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष 'लघु परम्पराओं' का भी है। क्षेत्रीय स्तर पर अनेक धार्मिक-विश्वासों, अनुष्ठानों

और देवी-देवताओं, साधु सन्तों की महत्ता इस प्रवृत्ति का परिचायक है। इन 'लघु परम्पराओं' का प्रमुख उदाहरण ग्रामीण धार्मिक-विश्वास और कर्मकाण्ड हैं। भारतीय ग्रामीण समुदाय एक ओर वृहद हिन्दू-परम्पराओं को स्वीकार करते हुए वृहद भारतीय समाज का एक अंग है तो दूसरी और इसमें अनेक स्थानीय विश्वास और धार्मिक मान्यताओं की उपस्थिति इसे एक पृथक अस्तित्व भी प्रदान करता है। **मैकियम मैरिट**[4] ने भारतीय ग्रामीण धार्मिक संरचना की इन प्रवृतियों का उल्लेख अपने *'किसन गढ़ी'* ग्राम के अध्ययन में 'सार्वभौमीकरण' और 'स्थानीयकरण' की अवधारणाओं के माध्यम से किया है। इसी प्रकार **एस.सी. दुबे**[5] ने *'समीर पेट'* गांव के अध्ययन के द्वारा यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि ग्रामीण धर्म वृहद हिन्दू-परम्पराओं और स्थानीय धार्मिक-विश्वासों एवं क्रिया-कलापों का मिश्रण है।

प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत यह देखने का प्रयास किया गया है कि ग्रामीण धार्मिक-विश्वासों एवं कर्मकाण्डों में नवीन-शक्तियों के कारण किन नवीन-मूल्यों एवं प्रवृत्तियों का विकास हो रहा है। यानी जनपद अयोध्या के हैरिंगटनगंज विकासखंड की विभिन्न ग्रामसभाओं के निवासी किस मात्रा में हिन्दू वृहद-परम्पराओं से प्रभावित हैं और उनकी स्थानीय मान्यताओं, परम्पराओं का स्वरूप क्या है? आयु, शिक्षा और जाति का अन्तर उनके विश्वास और कर्मकाण्डों को किस मात्रा में प्रभावित करता है?

कर्म के सिद्धान्त में विश्वास:

हिन्दू जीवन-दर्शन का एक मौलिक आधार कर्मफल में विश्वास है। यह मान्यता है कि जीव को अपने अच्छे एवं बुरे-कर्म के फल का भोग अवश्य करना पड़ता है। यह मान्यता वृहद भारतीय संस्कृति का एक आवश्यक अंग है जिसका प्रसरण साधारण जनता तक हुआ है। ग्रामीण जीवन में कर्म के सिद्धान्त के महत्व की विवेचना करते हुये **श्रीनिवास** ने लिखा है कि- *"गाँव के लोगों के नैतिक दृष्टिकोण और क्रियाकलापों के निर्धारण में महत्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति के वर्तमान स्थिति, उसके दुर्भाग्य और संकटों की व्याख्या कर्म के सिद्धान्त के आधार पर की जाती है।"*[6]

प्रस्तुत अध्ययन के उत्तरदाताओं से इस परम्परागत मान्यता के प्रति ध्यान आकर्षित करते हुये उनसे पूछा गया है कि क्या वे कर्म के सिद्धान्त में आस्था रखते हैं? प्राप्त तथ्यों से यह विदित होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 70 प्रतिशत उत्तरदाता इस सिद्धान्त में पूर्ण आस्था रखते हैं। 10 प्रतिशत उत्तरदाता इस सिद्धान्त में विश्वास नहीं रखते हैं और 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस सम्बन्ध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नहीं किया है। अतः स्पष्ट है कि कर्मफल के सिद्धान्त में आधे से अधिक उत्तरदाताओं की आस्था होते हुये भी अनेक ऐसे उत्तरदाता हैं जो इस सम्बन्ध में किसी स्पष्ट दृष्टिकोण को प्रकट नहीं करते हैं। उत्तरदाताओं के संशय की यह स्थिति कर्मफल के सिद्धांत में उनके विश्वास की कमी का प्रतीक है।

पुनर्जन्म में विश्वास:

पुनर्जन्म में आस्था हिन्दू जीवन-दर्शन का एक महत्वपूर्ण आधार है। यह मान्यता है कि जीव को अपने कर्म के फल के परिणामस्वरूप बार-बार जन्म लेना पड़ता है, मोक्ष प्राप्ति की स्थिति में ही जीव को जन्म-मरण के बन्धन से मुक्ति प्राप्त होती है। पुनर्जन्म के सिद्धान्त के सन्दर्भ में संकलित आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 80 प्रतिशत उत्तरदाता पुनर्जन्म के सिद्धान्त में विश्वास रखते है। 11 प्रतिशत उत्तरदाता इस सिद्धान्त को नहीं मानते और 9 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस सम्बन्ध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नहीं किया है। अतः स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाता पुनर्जन्म के सिद्धान्त में विश्वास रखते है।

भाग्य में विश्वास:

भाग्यवादिता भारतीय समाज विशेषकर ग्रामीण समाज की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है जिसने जनसाधारण में यह विश्वास प्रचलित किया है कि व्यक्ति के प्रयत्न और परिश्रम से अधिक महत्वपूर्ण उसका भाग्य है। भाग्य के कारण ही व्यक्ति को सुख-दुःख भोगना पड़ता है। वर्तमान अध्ययन के 60 प्रतिशत उत्तरदाता भाग्य में विश्वास रखते हैं। 25 प्रतिशत उत्तरदाताओं का भाग्य में विश्वास नहीं है और 15 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस सम्बन्ध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नहीं किया है। अतः स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाताओं का भाग्य में विश्वास है फिरभी उत्तरदाताओं का एक बड़ा वर्ग भाग्य के सिद्धान्त को संशय की दृष्टि से देखता है।

अराधना एवं भक्ति:

उत्तरदाताओं के धार्मिक विश्वास का अध्ययन करते हुये उनसे पूछा गया है कि क्या वे किसी देवी-देवता की आराधना या भक्ति करते हैं? प्राप्त तथ्यों से यह विदित होता है कि 72 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने हाँ में उत्तर 15 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया तथा 13 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस सम्बन्ध में कोई उत्तर नहीं दिया है। स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाता भक्ति या अराधना में विश्वास करते हैं।

भक्ति का क्रम:

उत्तरदाताओं के धार्मिक विश्वास का अध्ययन करते हुये उनसे पूछा गया है कि वे अपने आराध्य देव की पूजा मुख्य रूप से कब-कब करते है? प्राप्त उत्तरों से स्पष्ट होता है कि 42 प्रतिशत उत्तरदाता प्रतिदिन भक्ति करते हैं, 35 प्रतिशत उत्तरदाता साप्ताहिक भक्ति करते हैं जबकि 23 प्रतिशत उत्तरदाता केवल विशेष-पर्वों पर ही भक्ति करते हैं।

स्थानीय देव:

भारतीय ग्रामीण समुदाय के धार्मिक-जीवन की एक महत्वपूर्ण विशेषता वृहद हिन्दू-संस्कृति से भिन्न स्थानीय देवी-देवताओं और कर्म काण्डों में आस्था का पाया जाना है। प्रस्तुत अध्ययन में यह जानने का प्रयास किया गया कि क्या सभी गाँवों में स्थानीय देव की पूजा होती है या नहीं? उत्तरदाताओं से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि लगभग सभी गाँव में स्थानीय देवी-देवता के स्थान हैं किन्तु अब कुछ प्रमुख देवताओं की ही पूजा होती है। जाहिर है कि ग्रामीण समुदाय की आस्था में कमी आयी है।

साधु-संतों का महत्व:

भारतीय ग्रामीण समाज में साधु-सन्त को धार्मिक पुरूष और अलौकिक शक्ति का प्रतीक मानकर अत्यन्त श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता है तथा इन साधु-सन्तों का आदर सत्कार एक पुण्य-कर्म माना जाता है। वर्तमान अध्ययन के उत्तरदाताओं से पूछा गया है कि क्या उनके परिवार में साधु-सन्त को विशेष महत्व दिया जाता है? प्राप्त उत्तरों से यह विदित होता है कि 50 प्रतिशत परिवारों में साधु-सन्त को अत्यधिक महत्व प्रदान किया जाता है। 25 प्रतिशत परिवारों में कोई महत्व नहीं प्रदान किया जाता और 25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस सम्बन्ध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नहीं किया है। साधु-संतों में आस्था की कमी ग्रामीण समाज में बढ़ते तार्किक-मूल्यों के प्रतीक समझे जा सकते हैं।

अप्राकृतिक शक्तियों में विश्वास:

ग्रामीण और पिछड़े हुए समाजों में भूत-प्रेत और अप्राकृतिक शक्तियों में विश्वास का अत्यधिक प्रचलन रहा है। यह मान्यता प्रचलित रही है कि जो व्यक्ति अप्राकृतिक कार्यो से जैसे दुर्घटना, बीमारी आदि के कारण मरने वाले व्यक्ति की आत्मा भटकती रहती है और भूत-प्रेत, चुड़ैल आदि का रूप धारण कर लेती है। ये प्रेत आत्माएं गांव के निकटवर्ती निर्जन स्थानों या पेड़ जैसे पीपल, इमली आदि पर निवास करते है। ग्रामीण समुदाय के सदस्य इन प्रेतात्माओं और अप्राकृतिक शक्तियों से भय खाते हैं और उनकी संतुष्टि के लिए अनेक प्रकार के क्रिया-कलाप करते हैं। यह पूछा गया है कि क्या उनके परिवार में भूत-प्रेत और अप्राकृतिक शक्तियों में विश्वास किया जाता है? प्राप्त उत्तरों से यह विदित होता है कि 20 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते हैं कि उनके परिवार में इन शक्तियों में अत्यधिक विश्वास किया जाता है, 25 प्रतिशत उत्तरदाताओं में

सामान्य विश्वास और 55 प्रतिशत परिवारों में भूत-प्रेत में विश्वास नहीं किया जाता है। अतः स्पष्ट है कि गांव के लोग लगभग आधे परिवारों में भूत-प्रेत में विश्वास अभी भी प्रचलित हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि शिक्षा से प्राप्त तार्किकता अन्धविश्वासों को सीमित करने में निश्चित रूप से सहायक है।

त्यौहारों का महत्व:

त्यौहार धार्मिक, सामाजिक और सामुदायिक दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इन अवसरों पर न केवल धार्मिक भावना की अभिव्यक्ति होती है बल्कि ये सामाजिक सुदृढ़ता और सामंजस्य को भी प्रतिबिम्बित करते हैं। ग्रामीण जीवन में त्यौहारों का महत्व और भी अधिक है क्योंकि इसका सम्बन्ध किसी न किसी प्रकार से कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था से अत्यन्त निकट है। वर्तमान अध्ययन के उत्तरदाताओं से पूछा गया है कि उनके परिवार में किन त्यौहारों को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है? प्राप्त उत्तरों से यह विदित होता है कि 10 प्रतिशत परिवारों में विशेष रूप से, 80 प्रतिशत परिवारों में सामान्य रूप से और 10 प्रतिशत परिवारों में नहीं मनाया जाता है।

अतः अध्ययन से यह विदित होता है कि भारतीय ग्रामीण समुदाय प्रस्थितियों, भूमिकाओं, मूल्यों तथा विचारों की एक अंतःसम्बन्धी व्यवस्था हैं। धार्मिक क्रिया-कलापों और जातिगत सम्बन्धों में ग्रामीण समुदाय के विभिन्न अंगों को अन्तःसम्बन्धित किया है। धार्मिक कृत्य ग्रामीण समूह एवं व्यक्तियों को एक-दूसरे से सम्बन्धित करते हैं किन्तु आधुनिकीकरण, नगरीकरण, धर्मनिरपेक्षीकरण जैसी शक्तियों के प्रभाव स्वरूप परम्परागत ग्रामीण धार्मिक जीवन परिवर्तित होने लगा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

- राधाकृष्णन, एस., (1947). *रिलीजन एण्ड सोसायटी*. जॉर्ज एलिन एन अनविन लिमिटेड.
- मुखर्जी, आर. (1971). *सिक्स विलेजेज़ ऑफ बंगाल*. पापुलर बॉम्बे.
- गिलिन एण्ड गिलिन (1948). *कल्चरल सोशियॉलाजी*. दि मैकमिलन कम्पनी.
- मैरिट, एम (1955). *विलेज इण्डिया*. आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
- दुबे, एस. सी. (1967). *इण्डियन विलेज*. एलाइड पब्लिशर.
- श्रीनिवास, एम. एन. (1974). *ए रेमेंबर्ड विलेज*. आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.